॥ ओ३म् ॥

वैदिक-नित्यकर्म-विधिः

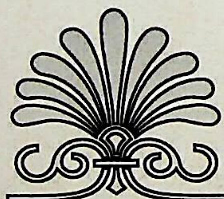
मूल मात्र

सन्ध्या, प्रार्थना, स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण, दर्शपौर्णमासेष्टि और पितृयज्ञादि सम्पूर्ण दैनिक कर्त्तव्य, सामान्यप्रकरण, दैनिक तथा बृहद् अग्निहोत्र सहित

महर्षि दयानन्द सरस्वती

- ट्रस्ट के उद्देश्य -

प्राचीन वैदिक साहित्य का अन्वेषण, उसकी रक्षा तथा प्रचार एवं भारतीय संस्कृति, भारतीय शिक्षा, भारतीय-विज्ञान और चिकित्सा द्वारा जनता की सेवा ।



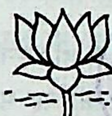
प्रार्थना

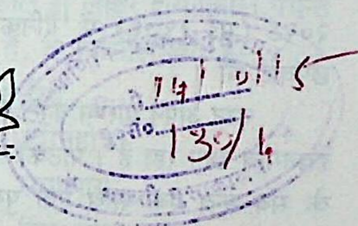
असतो मा सद् गमय,
तमसो मा ज्योतिर्गमय,
मृत्योर्माऽमृतं गमय ।

ओ३म्

वैदिक-नित्यकर्म-विधिः

स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण, बृहद्-हवन के मन्त्रों सहित
(मूल मात्र)





प्रकाशक

रामलाल कपूर ट्रस्ट

ग्राम रेवली, पो० ई० सी० मुरथल
सोनीपत, (हरयाणा) १३१०३९
दूरभाष - ०१३०-२४८२८५७, ३२९०२७६

संगणकाक्षरयोजक
वेदव्रत
(पाणिनि महाविद्यालय रेवली)

चतुर्दश बार
११,००० प्रतियाँ

श्रावण २०६४
जुलाई २००७

मूल्य- ४.००
प्रचारार्थ

प्रकाशकीय (चतुर्दश संस्करण)

श्रीमती माता प्रेमदेवी जी दरगन ने अपने स्वर्गीय पतिदेव श्री केशव चन्द्र जी दरगन की स्मृति में 'दैनिक नित्य-कर्म-विधि' दैनिक कर्मों की विधि और मन्त्रों के अर्थ सहित प्रकाशित करने के लिये चार सहस्र रुपये श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट को दान में दिये थे। तदनुसार ट्रस्ट ने ज्येष्ठ संवत् २०२८ (मई १९७१) में 'दैनिक नित्य-कर्म-विधि' की पांच हजार प्रतियां छपवाई थीं ।

ट्रस्ट अपने प्रारम्भ काल से ही 'सन्ध्योपासनविधिः' (अर्थ सहित)तथा हवनमन्त्र छाप रहा है । पाठकों की यह मांग रहती है कि सन्ध्या और हवन के सब मन्त्र एक साथ एक पुस्तक में उपलब्ध कराये जायें। अतः हमने परीक्षण के तौर पर पूर्व प्रकाशित 'वैदिक नित्य-कर्म-विधि' का यह मूलमात्र संस्करण प्रकाशित किया था ।

इस ग्रन्थ में दैनिक कर्मों की विधि और मन्त्रों के साथ स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण, बृहद्हवन, दर्शेष्टि, पौर्णमासेष्टि, तथा वैदिक संगठन-सूक्त के मन्त्र दैनिक प्रार्थना और कुछ भजन दिये गये हैं । हमारे इस प्रयत्न को आर्य जनता ने सोत्साह अपनाया । परिणामतः इस पुस्तक के तेरह संस्करण समाप्त हो चुके हैं । इसके पहले, दूसरे तथा सातवें संस्करणों की पांच-पांच सहस्र प्रतियां, तीसरे से दसवें (सातवें को छोड़कर) संस्करणों की दस-दस सहस्र प्रतियां, तेरहवें की ग्यारह सहस्र प्रतियां छपी थीं । वर्त्तमान चौदहवें संस्करण की भी ग्यारह सहस्र प्रतियां छापी गई हैं ।

हम आर्य जनता के प्रति आभार प्रकट करते हैं कि उसने उदारता और उत्साह पूर्वक ट्रस्ट के प्रकाशनों को अपनाया है ।

रेवली, सोनीपत (हरियाणा) — मन्त्री
श्रावण संवत् २०६४ — रामलाल कपूर ट्रस्ट



ओ३म्

अथ वैदिकनित्यकर्म-विधिः

इस पुस्तक में आर्यों के प्रतिदिन के नित्य कर्त्तव्य कर्मों का विधान है। वैदिक मन्तव्य के अनुसार प्रातःकाल से लेकर शयनकाल पर्यन्त जो-जो विशेष नैत्यिक कर्म करने होते हैं, वे निम्नलिखित हैं-

प्रातःकाल के कर्त्तव्य

१- शयन से उठकर ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना
२- शौच, दन्तधावन, व्यायाम
३- स्नान
४- सन्ध्योपासना
५- अग्निहोत्र
६- स्वाध्याय
७- पितृ-यज्ञ
८- बलिवैश्वदेव-यज्ञ
९- अतिथि-यज्ञ

सायंकाल के कर्त्तव्य

१- अग्निहोत्र
२- सन्ध्योपासना
३- पितृ-यज्ञ
४- बलिवैश्वदेव-यज्ञ
५- अतिथि-यज्ञ
६- शयन से पूर्व शिव-संकल्प की प्रार्थना

इसके साथ ही इसे अधिक उपयोगी बनाने के लिये इस ग्रन्थ में आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संग में प्रयुक्त होने वाले स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण, और बृहद् हवन के मन्त्र भी दे रहे हैं। अमावस्या और पूर्णिमा को करने योग्य पाक्षिक **दर्शेष्टि** और **पौर्णमासेष्टि** के मन्त्र तथा कुछ प्रार्थना और भजन भी दे रहे हैं।

इस पुस्तक में लिखे गये कर्मों के सब मन्त्रों का अर्थ हमारी

बड़ी **'वैदिक नित्यकर्म-विधि'** में देखें। यहां केवल उक्त कर्मों के मन्त्र, और उनके करने की विधि ही लिखी है।

नित्यकर्मों का फल – इन नित्यकर्मों को यथविधि करने से ज्ञान की प्राप्ति, आत्मा की उन्नति, और आरोग्यता होने से शरीरसुख, और व्यवहार और परमार्थ की सिद्धि होती है। इनसे मनुष्य जीवन के **धर्म, अर्थ, काम** और **मोक्ष** इन चार पुरुषार्थों की सिद्धि होती है।

जागरण-वेला में पठनीय मन्त्र

ओं प्राता रत्नं प्रातरित्वा दधाति तं चिकित्वान् प्रतिगृह्या नि धत्ते।
तेन प्रजां वर्धयमान आयू रायस्पोषेण सचते सुवीरः ॥१॥

ऋ० १.१२५.१ ॥

ओं प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम ॥२॥
ओं प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्त्ता।
आध्रश्चिद् यं मन्यमानस्तुरश्चिद् राजा चिद् यं भगं भक्षीत्याह ॥३॥
ओं भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥४॥
ओम् उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥५॥
ओं भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुर एता भवेह ॥६॥

ऋ० ७.४१.१-५ ॥

स्नान के समय पठनीय मन्त्र

ओ३म् आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन ।
महे रणाय चक्षसे ॥१॥
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः ।
उशतीरिव मातरः ॥२॥
तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ ।
आपो जनयथा च नः ॥३॥
ईशाना वार्याणां क्षयन्तीश्चर्षणीनाम् ॥
अपो याचामि भेषजम् ॥४॥ अ० १.५ ।
शं न आपो धन्वन्याः३ शमु सन्त्वनूप्याः ।
शं नः खनित्रिमा आपः शमु याः कुम्भ आभृताः शिवा नः सन्तु वार्षिकीः ॥ अ० १.६.४ ।

अथ सन्ध्योपासन-विधिः

अब सन्ध्योपासना=ब्रह्मयज्ञ की विधि लिखी जाती है । 'सन्ध्या' शब्द का अर्थ यह है कि जिसमें भली-भांति परमेश्वर का ध्यान करते हैं, वा ध्यान किया जाये, वह 'सन्ध्या' कहाती है । सो रात और दिन के संयोग समय दोनों सन्ध्याओं में सब मनुष्यों को परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिये ।

पहिले बाह्य जलादि से शरीर की शुद्धि, और राग-द्वेष आदि के त्याग से भीतर की शुद्धि करनी चाहिये । क्योंकि मनु जी ने (५.१०९ में) लिखा

है कि शरीर जल से, मन सत्य से, जीवात्मा विद्या और तप से, और बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है । परन्तु शरीर-शुद्धि की अपेक्षा अन्तःकरण की शुद्धि सब को अवश्य करनी चाहिये । क्योंकि वही सर्वोत्तम और परमेश्वर-प्राप्ति का एक साधन है ।

पहले कुशा वा हाथ से मार्जन करें, अर्थात् परमेश्वर का ध्यान आदि करने के समय किसी प्रकार का आलस्य न आवे, इसलिये शिर और नेत्र आदि पर जलप्रक्षेप अवश्य करें । यदि आलस्य न हो तो न करें । फिर कम से कम तीन प्राणायाम करें । अर्थात् भीतर के वायु को बल से बाहर निकाल कर यथाशक्ति बाहर ही रोक दें । फिर शनैः शनैः ग्रहण करके कुछ देर भीतर ही रोक के बाहर निकाल दें, और वहाँ भी कुछ देर रोकें । इस प्रकार कम से कम तीन बार करें । इससे आत्मा और मन की स्थिति सम्पादन करें । इसके अनन्तर आगे लिखे 'गायत्री-मन्त्र' से शिखा को बांधकर रक्षा करें ।

अथ गायत्री-मन्त्रः

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ य० ३६.३ ॥

शिखा-बन्धन का प्रयोजन यह है कि केश इधर-उधर न गिरें । सो यदि केशादिपतन न हो, तो न करे । और रक्षा का प्रयोजन यह है कि परमेश्वर प्रार्थित होकर सब भले कामों में सदा सब जगह में हमारी रक्षा करे ।

अथाचमन-मन्त्रः

निम्न मन्त्र को एक बार बोलकर जल से तीन आचमन करें-

ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥ य० ३६.१२ ॥

अथेन्द्रियस्पर्श-मन्त्राः

ओं वाक् वाक् । इससे मुख ।

ओं प्राणः प्राणः । इससे नासिका ।

ओं चक्षुः चक्षुः । इससे दोनों नेत्र ।

ओं श्रोत्रं श्रोत्रम् । इससे दोनों कान ।

ओं नाभिः । इससे नाभि ।

ओं हृदयम् । इससे हृदय ।

ओं कण्ठः । इससे कण्ठ ।

ओं शिरः । इससे शिर ।

ओं बाहुभ्यां यशोबलम् । इससे दोनों भुजाएं ।

ओं करतलकरपृष्ठे ।। इससे दोनों हथेली, तथा उनके ऊपरी भाग ।

अथ मार्जन-मन्त्राः

ओं भूः पुनातु शिरसि । इससे शिर ।

ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः । इससे दोनों नेत्र ।

ओं स्वः पुनातु कण्ठे । इससे कण्ठ ।

ओं महः पुनातु हृदये । इससे हृदय ।

ओं जनः पुनातु नाभ्याम् । इससे नाभि ।

ओं तपः पुनातु पादयोः । इससे दोनों पैर ।

ओं सत्यं पुनातु पुनश्शिरसि । इससे पुनः शिर ।

ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र । इससे सब शरीर पर ।

अथ प्राणायाम-मन्त्राः

ओं भूः । ओं भुवः । ओं स्वः । ओं महः । ओं जनः । ओं तपः । ओं सत्यम् ।।

अथाघमर्षण-मन्त्राः

ओम् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ॥१॥
समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत ।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ॥२॥
सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् ।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥३॥
ऋ० १०.१९०.१-३ ॥

अथाचमन-मन्त्रः

निम्न मन्त्र को एक बार बोलकर जल से तीन आचमन करें —

ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ।
शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥ य० ३६.१२ ॥

तदनन्तर गायत्र्यादि मन्त्रों के अर्थ-विचारपूर्वक परमेश्वर की स्तुति अर्थात् परमेश्वर के गुण और उपकार का ध्यान कर पश्चात् प्रार्थना करें ।

अथ मनसापरिक्रमा-मन्त्राः

निम्न मन्त्रों से ईश्वर की व्यापकता का विचार करें-

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥१॥

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥२॥

प्रतीची दिग् वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३॥

उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥४॥

ध्रुवा दिग् विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥५॥

ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥६॥

अ० ३.२७.१–६ ॥

अथोपस्थान-मन्त्राः

निम्न मन्त्रों से ईश्वर के तेजःस्वरूप का ध्यान करें–

ओम् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥१॥

य० ३५.१४ ॥

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः ।
दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥२॥ य० ३३.३१ ॥

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः । आप्रा

द्यावापृथिवी अन्तरिक्षꣳ सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा ॥३॥ य० ७.४२॥

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥४॥ य० ३६.२४ ॥

अथ गुरु-मन्त्रः

निम्न मन्त्र का जाप करें –

ओं भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ य० ३६.३ ॥

अथ समर्पणम्

हे ईश्वर दयानिधे ! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः ॥

अथनमस्कार-मन्त्रः

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ य० १६.४१ ॥

इति सन्ध्योपासनाविधिः समाप्तः ॥

अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना-मन्त्राः

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।
यद् भद्रन्तन्न आ सुव ॥१॥ य० ३०.३ ॥

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्य युक्त, शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कर दीजिये । और जो कल्याणकारक गुण कर्म स्वभाव और

पदार्थ हैं, वह सब हमको प्राप्त कराइये ॥१॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२॥

य० १३.४ ॥

जो स्वप्रकाशस्वरूप है, और जिसने प्रकाश करने वाले सूर्य-चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं, जो उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का प्रसिद्ध स्वामी एक ही चेतन स्वरूप था, जो सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व वर्त्तमान था, वह इस भूमि और सूर्यादि को धारण कर रहा है । हम लोग उस सुखस्वरूप शुद्ध परमात्मा के लिये ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से भक्ति किया करें ॥२॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३॥

य० २५.१३ ॥

जो आत्मज्ञान का दाता शरीर, आत्मा और समाज के बल का देने वाला है, जिसकी सब विद्वान् लोग उपासना करते हैं, और जिसके प्रत्यक्ष सत्य स्वरूप शासन और न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं, जिसका आश्रय ही मोक्ष सुखदायक है, जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस सुखदायक सकल ज्ञान के देने वाले परमात्मा की प्राप्ति के लिये आत्मा और अन्तःकरण से विशेष भक्ति करें, अर्थात् उसी की आज्ञा का पालन करने में तत्पर रहें ॥३॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥४॥

य० २५.११ ॥

जो प्राण वाले और अप्राणिरूप जगत् का अपनी अनन्त महिमा से एक

ही विराजमान राजा है, जो मनुष्यादि और गौ-आदि प्राणियों के शरीर की रचना करता है, हम लोग उस सुखस्वरूप सकलैश्वर्य के देने हारे परमात्मा के लिये अपनी सकल उत्तम सामग्री से विशेष भक्ति करें ।।४।।

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।५।।

य० ३२.६ ।।

जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्य और भूमि को धारण, जिस जगदीश्वर ने सुख को धारण, और जिस ईश्वर ने दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है, जो आकाश में सब लोक-लोकान्तरों की विशेष मानयुक्त, अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों का निर्माण करता, और भ्रमण कराता है, हम लोग उस सुखदायक कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिये सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें ।।५।।

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।।६।।

ऋ० १०.१२१.१० ।।

हे सब प्रजा के स्वामी परमात्मा ! आपसे भिन्न दूसरा कोई उन, इन सब उत्पन्न हुए जड़-चेतनादिकों का तिरस्कार नहीं करता । अर्थात् आप सर्वोपरि हैं । जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग आपका आश्रय लें, और वाञ्छा करें, वह-वह हमारी कामनायें सिद्ध हों । जिससे हम धनैश्वर्यों के स्वामी बनें ।।६।।

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ।।७।।

य० ३२.१० ।।

हे मनुष्यो ! वह परमात्मा हमारा भ्राता के समान सहायक, सकल जगत्

का उत्पादक, सब कामों का पूर्ण करने वाला, सम्पूर्ण लोकमात्र, नाम, स्थान और जन्मों को जानता है। जिस सांसारिक सुख-दुःख से रहित, नित्यानन्दयुक्त, मोक्षस्वरूप, धारण करने वाले परमात्मा में मोक्ष को प्राप्त होकर विद्वान् लोग स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। हम लोग मिलकर सदा उसकी भक्ति किया करें ॥७॥

ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥८॥

य० ४०.१६ ॥

हे स्वप्रकाश, ज्ञानस्वरूप, सब जगत् के प्रकाश करने हारे, सकल सुखदाता परमेश्वर ! आप जिससे सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं, कृपा करके हम लोगों को विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्राप्त कराइये, और हमसे कुटिलतायुक्त पापरूप कर्म को दूर कीजिये। इस कारण हम लोग आपकी बहुत प्रकार की स्तुतिरूप नम्रतापूर्वक प्रशंसा सदा किया करें, और सर्वदा आनन्द में रहें ॥८॥

अथ स्वस्तिवाचनम्

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।
होतारं रत्नधातमम् ॥१॥
स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव ।
सचस्वा नः स्वस्तये ॥२॥ ऋ० १.१.१,९ ॥
स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः ।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥३॥

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः ।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥४॥
विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये ।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥५॥
स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति ।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥६॥
स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि ॥७॥

ऋ० ५.५१.११-१५ ॥

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥

ऋ० ७.३५.१५ ॥

येभ्यो माता मधुमत् पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः ।
उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये ॥९॥
नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद् देवासो अमृतत्वमानशुः ।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥१०॥
सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम् ।
ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये ॥११॥
को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन ।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥१२॥
येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्त होतृभिः ।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥१३॥

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः ।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥१४॥
भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् ।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥१५॥
सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् ।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये ॥१६॥
विश्वे यजत्रा अधिवोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः ।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ॥१७॥
अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः ।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥१८॥
अरिष्टः स मर्त्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि ।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥१९॥
यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने ।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ॥२०॥
स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति ।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥२१॥
स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति ।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा ॥२२॥

ऋ० १०.६३.३-१६ ॥

इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा व स्तेन ईशत माघशꣳसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य

पशून् पाहि ॥२३॥ य० १.१ ॥

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽ अपरीतास उद्भिदः ।
देवा नो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे ॥२४॥
देवानां भद्राः सुमतिर्ऋजूयतां देवानाᳬं रातिरभि नो निवर्त्तताम् ।
देवानाᳬंसख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥२५॥
तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥२६॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥२७॥
भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳬंसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥२८॥

य० २५.१४,१५,१८,१९,२१ ॥

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये ।
नि होता सत्सि बर्हिषि ॥२९॥
त्वमग्ने यज्ञानाᳬं होता विश्वेषाᳬं हितः ।
देवेभिर्मानुषे जने ॥३०॥ साम० पूर्वा० प्रपा० १ । द० १ । मं० १,२ ॥

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः ।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥३१॥

अ० १.१.१ ॥

इति स्वस्तिवाचनम् ॥

अथ शान्तिकरणम्

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या ।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥१॥
शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः ।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥२॥
शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः ।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥३॥
शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् ।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥४॥
शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु ।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥५॥
शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः ।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ॥६॥
शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः ।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥७॥
शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्त्रः प्रदिशो भवन्तु ।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः॥८॥
शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः ।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥९॥
शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः ।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥१०॥

शं नो॑ दे॒वा वि॒श्वदे॑वा भवन्तु शं सर॑स्वती स॒ह धी॒भिर॑स्तु ।
शम॑भि॒षाचः॒ शमु॑ राति॒षाचः॒ शं नो॑ दि॒व्याः पार्थि॑वाः॒ शं नो॒ अप्याः॑ ॥११॥
शं नः॑ स॒त्यस्य॒ पत॑यो भवन्तु शं नो॒ अर्व॑न्तः॒ शमु॑ सन्तु॒ गावः॑ ।
शं न॑ ऋ॒भवः॑ सु॒कृतः॑ सु॒हस्ताः॒ शं नो॑ भवन्तु पि॒तरो॒ हवे॑षु ॥१२॥
शं नो॑ अ॒ज एक॑पाद् दे॒वो अ॑स्तु शं नोऽहि॑र्बु॒ध्न्य१॒ः शं स॑मु॒द्रः ।
शं नो॑ अ॒पां नपा॑त् पे॒रुर॑स्तु॒ शं नः॒ पृश्नि॑र्भवतु दे॒वगो॑पा ॥१३॥
ऋ० ७.३५.१-१३ ॥

इन्द्रो॒ विश्व॑स्य राजति । शन्नो॑ अस्तु द्वि॒पदे॒ शञ्चतु॑ष्पदे ॥१४॥
शन्नो॒ वातः॑ पवता॒ᳬं शन्न॑स्तपतु सूर्य्यः॑ ।
शन्नः॒ कनि॑क्रदद्दे॒वः प॒र्जन्यो॑ अ॒भि वर्षतु ॥१५॥
अहा॑नि॒ शं भ॑वन्तु नः॒ शᳬं रात्रीः॒ प्रति॑ धीयताम् ।
शन्न॑ इन्द्रा॒ग्नी भ॑वता॒मवो॑भिः॒ शन्न॒ इन्द्रा॒वरु॑णा रा॒तह॑व्या ।
शन्न॑ इन्द्रापू॒षणा॒ वाज॑साता॒ै शमिन्द्रा॒सोमा॑ सुवि॒ताय॒ शं योः ॥१६॥
शन्नो॑ दे॒वीर॒भिष्ट॑य॒ आपो॑ भवन्तु पी॒तये॑ ।
शंयो॒रभि स्र॑वन्तु नः ॥१७॥

द्यौः शान्ति॑र॒न्तरि॑क्ष॒ᳬं शान्तिः॑ पृथि॒वी शान्ति॒राप॒ः शान्ति॒-रोष॑धय॒ः शान्तिः॑ । वन॒स्पत॑य॒ः शान्ति॒र्विश्वे॑ दे॒वाः शान्ति॒र्ब्रह्म॒ शान्ति॒ः सर्व॒ᳬं शान्ति॒ः शान्ति॑रे॒व शान्ति॒ः सा मा॒ शान्ति॑रेधि ॥१८॥

तच्चक्षु॑र्दे॒वहि॑तं पु॒रस्ता॑च्छु॒क्रमु॒च्च॑रत् । पश्ये॑म श॒रदः॑ श॒तं जीवे॑म श॒रदः॑ श॒तᳬं शृणु॑याम श॒रदः॑ श॒तं प्र ब्र॑वाम श॒रदः॑ श॒तमदी॑नाः स्याम श॒रदः॑ श॒तं भूय॑श्च श॒रदः॑ श॒तात् ॥१९॥

य० ३६.८,१०-१२,१७,२४ ॥

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२०॥
येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२१॥
यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२२॥
येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२३॥
यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२४॥
सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयते ऽभीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरञ्जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२५॥

य० ३४.१-६ ॥

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते ।
शꣳ राजन्नोषधीभ्यः ॥२६॥ साम० उत्तरा० प्रपा० १ । मं० ३ ॥

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे ।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥२७॥
अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात् ।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥२८॥

अ० १९.१५.५-६ ॥

इति शान्तिकरणम्

यज्ञ-प्रकरण

आचमन-मन्त्र

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥१॥ इससे एक ।

ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥२॥ इससे दूसरा ।

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥३॥

तैत्तिरीय आरण्यक प्र० १० । अनु० ३२,३५ ॥

इससे तीसरा आचमन करके, तत्पश्चात् जल लेकर नीचे लिखे मन्त्रों से अङ्गों का स्पर्श करें -

अङ्गस्पर्श-मन्त्र

ओं वाङ् म आस्येऽस्तु ॥ इस मन्त्र से मुख ।

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु ॥ इस मन्त्र से नासिका ।

ओम् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ॥ इस मन्त्र से दोनों आंखें ।

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥ इस मन्त्र से दोनों कान ।

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु ॥ इस मन्त्र से दोनों भुजाएं ।

ओं ऊर्वोर्म ओजोऽस्तु ॥ इस मन्त्र से दोनों जंघाएं ।

ओम् अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ॥

पारस्कर गृ० का० २ । क० ३ । मं० २५ ।

इन मन्त्र से दाहिने हाथ से जल स्पर्श करके मार्जन करना । तत्पश्चात् समिधा-चयन वेदि में करें । पुनः —

अग्न्याधान-मन्त्र

ओं भूर्भुवः स्वः ॥ गोभिल गृ० प्र० १ । ख० १ । सू० ११ ॥

इस मन्त्र का उच्चारण करके ब्राह्मण, क्षत्रिय वा वैश्य के घर से अग्नि ला, अथवा घृत का दीपक जला, उससे कपूर में लगा, किसी एक पात्र में धर, उसमें छोटि-छोटि लकड़ी लगा के यजमान या पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथों से उठा, यदि गर्म हो तो चिमटे से पकड़कर अगले मन्त्र से आधान करे । वह मन्त्र यह है-

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा । तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥

य० ३.५ ॥

इस मन्त्र से वेदी के बीच अग्नि को धर, उसमें छोटे-छोटे काष्ठ और थोड़ा कपूर धर, अगला मन्त्र पढ़ के व्यजन से अग्नि को प्रदीप्त करे-

ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथामयं च । अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥

य० अ० १५ । मं० ५४ ॥

जब अग्नि समिधाओं में प्रविष्ट होने लगे, तब चन्दन की अथवा पलाशादि की तीन लकड़ी आठ-आठ अंगुल की घृत में डुबो उनमें से नीचे लिखे एक-एक मन्त्र एक-एक समिधा को अग्नि में चढ़ावे । मन्त्र ये हैं -

समिदाधान के मन्त्र

ओम् अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे - इदं न मम ॥१॥ इससे एक ।

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदं न मम ॥२॥ इससे, और-

ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन । अग्नये जातवेदसे स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे - इदं न मम ॥३॥ इस मन्त्र से अर्थात्

इन दोनों से दूसरी ।

ओं तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि । बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा ॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे - इदं न मम ॥१॥

य० ३.१-३ ॥

इस मन्त्र से तीसरी समिधा की आहुति देवें ।

इन मन्त्रों से समिदाधान करके नीचे लिखे मन्त्र से पांच घृत की आहुति देवें-

घृताहुति-मन्त्र

ओम् अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे - इदं न मम ॥

तत्पश्चात् अञ्जलि में जल लेकर वेदि की पूर्व दिशा आदि चारों ओर छिड़कावें । इसके ये मन्त्र हैं -

जलप्रसेचन के मन्त्र

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व ॥१॥ इस मन्त्र से पूर्व ।

ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥२॥ इससे पश्चिम ।

ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥३॥ इससे उत्तर ।

गोभिल गृ० प्र० १ । ख० ३ । सू० १-३ ॥

ओं देव सवितः प्र सुव यज्ञं प्र सुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥४॥

य० ३०.१ ॥

इस मन्त्र से वेदि के चारों ओर जल छिड़कावे । इसके पश्चात् यज्ञकुण्ड के उत्तरभाग में जो एक आहुति, और यज्ञकुण्ड के दक्षिण भाग में

जो दूसरी आहुति देनी होती है, उसको 'आघारावाज्याहुति' कहते हैं । और कुण्ड के मध्य में जो आहुतियां दी जाती हैं, उनको 'आज्यभागाहुति' कहते हैं । सो घृतपात्र में से स्रुवा को भर अंगूठा, मध्यमा और अनामिका से स्रुवा पकड़ के -

आघारावाज्याहुति-मन्त्र

ओम् अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदं न मम ॥१॥

इस मन्त्र से वेदि के उत्तर भाग में ।

ओं सोमाय स्वाहा ॥ इदं सोमाय - इदं न मम ॥२॥

गोभिल गृ० प्र० १ । ख० ८ । सू० २४ ॥

इस मन्त्र से वेदि के दक्षिण भाग में प्रज्वलित समिधा पर आहुति देनी । तत्पश्चात् —

आज्यभागाहुति-मन्त्र

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये - इदं न मम ॥३॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय - इदं न मम ॥४॥

इन मन्त्रों से वेदि के मध्य में दो आहुति देनी । उसके पश्चात् उसी घृतपात्र में से स्रुवा को भरके प्रज्वलित समिधाओं पर व्याहृति की चार आहुति देवें -

संस्कारों तथा विशेष यज्ञों के मन्त्र

व्याहृति-आहुति-मन्त्र

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदं न मम ॥१॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे - इदं न मम ॥२॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय - इदं न मम ॥३॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥ इदमग्नि-वाय्वादित्येभ्यः - इदं न मम ॥४॥

ये चार घी की आहुति देकर स्विष्टकृत् होमाहुति एक ही दें । यह घृत अथवा भात की देनी चाहिये । इसका मन्त्र -

स्विष्टकृदाहुति-मन्त्र

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम् । अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा ॥ इदमग्नये स्विष्टकृते - इदं न मम ॥

इससे एक आहुति करके प्राजापत्याहुति नीचे लिखे मन्त्र को मन में बोलकर देनी चाहिये -

प्राजापत्याहुति-मन्त्र

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये - इदं न मम ॥

इससे मौन करके एक आहुति देकर, चार आज्याहुति घृत की देवें-

आज्याहुति-मन्त्र

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः । आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय - इदन्न मम ॥१॥

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयं स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय - इदन्न मम ॥२॥

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः

सुवीर्यम् । दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय - इदन्न मम ॥३॥ ऋ० ९.६६.१९-२१ ॥

ओं भूर्भुवः स्वः । प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये - इदन्न मम ॥४॥

ऋ० १०.१२१.१० ॥

इनसे घृत की चार आहुति करके, 'अष्टाज्याहुति' के निम्नलिखित मन्त्रों से सर्वत्र मङ्गलकार्यों में ८ (आठ) आहुति देवें । वे आठ आहुतिमन्त्र ये हैं —

ओं त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा ॥ इदमग्नीवरुणाभ्याम् - इदन्न मम ॥१॥

ओं त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ । अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा ॥ इदमग्नीवरुणाभ्याम् - इदन्न मम ॥२॥

ऋ० ४.१.४, ५ ॥

ओम् इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय । त्वामवस्युरा चके स्वाहा ॥ इदं वरुणाय - इदन्न मम ॥३॥

ऋ० १.२५.१९ ॥

ओं तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्र मोषीः स्वाहा ॥ इदं वरुणाय - इदन्न मम ॥४॥

ऋ० १.२४.११ ॥

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः - इदन्न मम ॥५॥

ओम् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयासि । अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजं स्वाहा ॥ इदमग्नये अयसे - इदन्न मम ॥६॥ कात्य० २५.१.११ ॥

ओम् उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय । अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा ॥ इदं वरुणायादित्यायादितये च - इदन्न मम ॥७॥ ऋ० १.२४.१५ ॥

ओं भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ । मा यज्ञं हिंसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा ॥ इदं जातवेदोभ्याम् - इदन्न मम ॥८॥ यजुः अ० ५ । मं० ३ ॥

दैनिक-अग्निहोत्र के मन्त्र

प्रातःकाल की आहुति के मन्त्र

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥१॥
ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥२॥
ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥३॥
ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या ।
जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥४॥

य० ३.१० ॥

सायंकाल की आहुति के मन्त्र

अब नीचे लिखे हुए मन्त्र सायंकाल में अग्निहोत्र के जानो -

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥१॥

ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥२॥

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥३॥

इस तीसरे मन्त्र को मन में उच्चारण करके तीसरी आहुति देनी चाहिये ।

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्रवत्या ।
जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ॥४॥ य० ३.९, १०॥

दोनों काल के मन्त्र

अब निम्नलिखित मन्त्रों से प्रातः सायं आहुति देनी चाहिये -

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा ॥ इदमग्नये प्राणाय- इदन्न मम ॥१॥

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा ॥ इदं वायवेऽपानाय- इदन्न मम ॥२॥

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा ॥ इदमादित्याय व्यानाय- इदन्न मम ॥३॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा ॥ इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः- इदन्न मम ॥४॥

ओम् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥५॥

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥६॥

य० ३२.१४ ॥

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।
यद् भद्रन्तन्न आ सुव स्वाहा ॥७॥ य० ३०.३ ॥

ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ॥८॥
य० ४०.१६ ॥

इन आठ मन्त्रों से एक-एक मन्त्र करके एक-एक आहुति देवे । ऐसे आठ आहुति देवे ।

ओ सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ॥

इस मन्त्र से तीन पूर्णाहुति, अर्थात् एक-एक बार पढ़के एक-एक करके तीन आहुति देवें ॥

इत्यग्निहोत्रविधिः संक्षेपतः समाप्तः ॥

अथ पक्षेष्टिः

अमावस्या के दिन सामान्य यज्ञ के पश्चात् पूर्णाहुति (सर्वं वै पूर्णं स्वाहा) से पूर्व निम्नलिखित मन्त्रों से स्थालीपाक (भात, खिचड़ी, लड्डू, मोहनभोग) से विशेष आहुतियां देवें -

ओम् अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदन्न मम ॥
ओम् इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा ॥ इदमिन्द्राग्नीभ्यां - इदन्न मम ॥
ओं विष्णवे स्वाहा ॥ इदं विष्णवे - इदन्न मम ॥

व्याहृति-आहुतियां (केवल घृत से)

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये – इदन्न मम ॥१॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे – इदन्न मम ॥२॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय – इदन्न मम ॥३॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥ इदमग्नि-वाय्वादित्येभ्यः – इदन्न मम ॥४॥

उपर्युक्त मन्त्रों से आहुतियां देने के पश्चात् 'ओ सर्वं वै पूर्णः स्वाहा' से पूर्णाहुति देवें ।

पौर्णमासेष्टि (पौर्णमास-यज्ञ)

पूर्णिमा के दिन सामान्य यज्ञ के पश्चात् पूर्णाहुति 'ओ सर्वं वै पूर्णः स्वाहा' से पूर्व निम्नलिखित मन्त्रों से स्थालीपाक (भात, खिचड़ी, लड्डू, मोहनभोग) से विशेष आहुतियां देवें -

ओम् अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदन्न मम ॥

ओम् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ॥ इदमग्नीषोमाभ्याम् - इदन्न मम ॥

ओं विष्णवे स्वाहा ॥ इदं विष्णवे - इदन्न मम ॥

व्याहृति-आहुतियां (केवल घृत से)

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये – इदन्न मम ॥१॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे – इदन्न मम ॥२॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय – इदन्न मम ॥३॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥ इदमग्नि-वाय्वादित्येभ्यः – इदन्न मम ॥४॥

इस विधि के पश्चात् 'ओ सर्वं वै पूर्णः स्वाहा' से पूर्णाहुति देवें ॥

अथ पितृ-यज्ञः

पितरों के अन्तर्गत माता-पिता आदि वयोवृद्ध सम्बन्धियों के अतिरिक्त उन विशिष्ट विद्वानों का भी समावेश होता है, जिन के एक स्थान पर निवास[1] करने से गृहस्थ को धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की शिक्षा मिलती रहती है । ऐसे मनुष्यों की श्रद्धापूर्वक सेवा करना **'श्राद्ध'** तथा भोजन-वस्त्र से उन्हें तृप्त करना **'तर्पण'** कहलाता है । इन ही दो कार्यों से पितृयज्ञ पूर्ण होता है, कोई विशेष आहुतियां इसकी नहीं हैं ।।

अथ बलिवैश्वदेव-यज्ञः

पाकशाला में बने खट्टे तथा नमकीन भोजन को छोड़कर, शेष पक्वान्न से चूहले की अग्नि में निम्न १० मन्त्रों से आहुतियां देवें -

ओम् अग्नये स्वाहा ।।१।।
ओं सोमाय स्वाहा ।।२।।
ओम् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ।।३।।
ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ।।४।।
ओं धन्वन्तरये स्वाहा ।।५।।
ओं कुह्वै स्वाहा ।।६।।
ओमनुमत्यै स्वाहा ।।७।।
ओं प्रजापतये स्वाहा ।।८।।

१. सर्वत्र विचरणशील विद्वान्, संन्यासी, उपदेशक जो अचानक घर पर पधारते हैं, वे 'अतिथि' कहाते हैं । उनके सत्कार के लिये अतिथि-यज्ञ पृथक् पृष्ठ २९ पर कहा है ।

ओं सह द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा ॥९॥
ओं स्विष्टकृते स्वाहा ॥१०॥

अथ अतिथि-यज्ञः

जो विद्वान्, उपदेशक, संन्यासी आदि मानव-जाति के सेवार्थ भ्रमण करते हुए अचानक गृहस्थ के द्वार पर आ जाते हैं, वे **'अतिथि'** कहलाते हैं। ऐसे महापुरुषों को सेवा-शुश्रूषा, अन्न-पान आदि से सत्कार करना अतिथि-यज्ञ कहलाता है।

यज्ञोपवीत धारण करने का मन्त्र

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥

भोजन आरम्भ करने से पूर्व बोलने का मन्त्र

ओम् अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः।
प्र प्र दातारं तारिष ऊर्ज्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥
य० ११.८३ ॥

सोते समय बोलने के मन्त्र

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥१॥
येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२॥
यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥३॥
येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥४॥
यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥५॥
सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरञ्जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥६॥
य० ३४.१-६ ॥

संगठन-सूक्त

ओं सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ ।
इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर ॥१॥
हे प्रभो ! तुम शक्तिशाली हो बनाते सृष्टि को ।
वेद सब गाते तुम्हें हैं कीजिये धन-वृष्टि को ॥

ओं सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वे सं जानाना उपासते ॥२॥
प्रेम से मिल कर चलो, बोलो सभी ज्ञानी बनो ।
पूर्वजों की भांति तुम, कर्त्तव्य के मानी बनो ॥
ओं समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम् ।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥३॥
हों विचार समान सब के, चित्त मन सब एक हों ।
ज्ञान देता हूँ बराबर, भोग्य पा सब नेक हों ॥
ओं समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सु सहासति ॥४॥
हों सभी के दिल तथा, संकल्प अविरोधी सदा ।
मन भरे हों प्रेम से, जिससे बढ़े सुख-सम्पदा ॥

वैदिक-राष्ट्रिय-प्रार्थना

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥

य० २२.२२ ॥

राष्ट्रिय-प्रार्थना

ब्रह्मन् ! स्वराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्मतेजधारी ।
क्षत्रिय महारथी हों, अरिदल विनाशकारी ।।
होवें दुधारु गौवें, पशु अश्व आशुवाही ।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही ।।
बलवान् सभ्य योद्धा, यजमान पुत्र होवें ।
इच्छानुसार वर्षें, पर्जन्य ताप धोवें ।।
फल-फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी ।
हो योग-क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी ।।

प्रार्थना

असतो मा सद् गमय,
तमसो मा ज्योतिर्गमय,
मृत्योर्माऽमृतं गमय ।।

शान्तिपाठः

ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।।

य० ३६.१७ ।।

भजन १

यज्ञरूप प्रभो हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिये ।
छोड़ देवें छल-कपट को मानसिक बल दीजिये ।।१।।
वेद की बोले ऋचाएं, सत्य को धारण करें ।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोक-सागर से तरें ।।२।।
अश्वमेधादिक रचायें, यज्ञ पर उपकार को ।
धर्म-मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को ।।३।।
नित्य श्रद्धा-भक्ति से, यज्ञादि सब करते रहें ।
रोग-पीड़ित विश्व के, संताप सब हरते रहें ।।४।।
भावना मिट जाये मन से, पाप अत्याचार की ।
कामनायें पूर्ण होवें, यज्ञ से नर-नार की ।।५।।
लाभकारी हो हवन, हर जीवधारी के लिये ।
वायु-जल सर्वत्र हों, शुभ गन्ध को धारण किये ।।६।।
स्वार्थ-भाव मिटे हमारा, प्रेम-पथ विस्तार हो ।
'इदन्न मम' का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो ।।७।।
हाथ जोड़ झुकाएँ मस्तक, वन्दना हम कर रहे ।
'नाथ' करुणारूप ! करुणा आपकी सब पर रहे ।।८।।

भजन २

पितु मातु सहायक स्वामी सखा, तुम ही एक नाथ हमारे हो ।
जिनके कछु और आधार नहीं, तिनके तुम ही रखवारे हो ।।१।।
सब भांति सदा सुखदायक हो, दुःख दुर्गुण नाशन हारे हो ।

प्रतिपाल करो सिगरे जग को, अतिशय करुणा उर धारे हो ।।२।।
भूलि हैं हम ही तुमको तुम तो, हमरी सुधि नाहिं विसारे हो ।
उपकारन को कछु अन्त नहीं, छिन ही छिन जो विस्तारे हो ।।३।।
महाराज महा महिमा तुम्हरी, समझे विरले बुधिवारे हो ।
शुभ शान्ति-निकेतन प्रेमनिधे, मन-मन्दिर के उजियारे हो ।।४।।
यहि जीवन के तुम जीवन हो, इन प्रानन के तुम प्यारे हो ।
तुम सों प्रभु पाय प्रताप हरि, केहि के अब और सहारे हो ।।५।।

भजन ३

प्रणाम ईश तुमको, तेरी यह महिमा सारी ।
हर जीव में विराजे, ज्योति प्रभु तुम्हारी ।।१।।
सूरज ये चाँद तारे, चमकें तेरे सहारे ।
सब काम को संवारे, उन पै कृपा तुम्हारी ।।२।।
योगी ऋषि मुनि जन, फल-फूल वन के खाकर ।
तेरी हि धुन लगावें, उन पै कृपा तुम्हारी ।।३।।
मन्दिर ये मस्जिदें और, गिरजे वा गुरुद्वारे ।
तेरे नाम के नजारे, सब तू ही तू पुकारें ।।४।।
प्रभु तेरा नाम लेकर, कर बांध विनति करते ।
भक्ति का दान दीजे, उसके हैं हम भिखारी ।।५।।

भजन ४

आज मिल सब गीत गाओ, उस प्रभु के धन्यवाद ।
जिस का यश नित गाते हैं, गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद ।।१।।

मन्दिरों में कन्दरों में, पर्वतों के शिखर पर ।
देते हैं लगातार सौ सौ, बार मुनिजन धन्यवाद ।।२।।
करते हैं जंगल में मंगल, पक्षिगण हर शाख पर ।
पाते हैं आनन्द मिल, गाते हैं स्वरभर धन्यवाद ।।३।।
कूप में तालाब में, सिन्धु की गहरी धार में ।
प्रेम-रस में तृप्त हो, करते हैं जलचर धन्यवाद ।।४।।
शादियों में कीर्त्तनों में, यज्ञ और उत्सव के आदि ।
मीठे स्वर से चाहिये, करें नारी नर सब धन्यवाद ।।५।।
गान कर 'अमीचन्द' भजनानन्द ईश्वर-स्तुति ।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता, कान धर-धर धन्यवाद ।।६।।

भजन ५

जय जय पिता परम आनन्ददाता ।
जगदादिकारण मुक्ति-प्रदाता ।।१।।
अनन्त और अनादि विशेषण हैं तेरे,
सृष्टि का स्रष्टा तू धर्त्ता संहर्त्ता ।।२।।
सूक्ष्म से सूक्ष्म तू है स्थूल इतना,
कि जिसमें यह ब्रह्माण्ड सारा समाता ।।३।।
मैं लालित व पालित हूँ पितृस्नेह का,
यह प्राकृत सम्बन्ध है तुझ से ताता ।।४।।
करो शुद्ध निर्मल मेरी आत्मा को,
करूं मैं विनय नित्य सायं व प्रातः ।।५।।
मिटाओ मेरे भय आवागमन के,

फिरूं न जन्म पाता और बिलबिलाता ।।६।।
बिना तेरे है कौन दीनन का बन्धु,
कि जिसको मैं अपनी अवस्था सुनाता ।।७।।
'अमी' रस पिलाओ कृपा करके मुझको,
रहूँ सर्वदा तेरी कीर्ति को गाता ।।८।।

भजन ६

चित्त की चञ्चलता मेरी, चिन्ता ही जगाय ।
भक्तिपथ से चित्त मेरा, फिसल-फिसल जाय । चित्त की ।।१।।
नित्य करुं ध्यान प्रभु का, प्रभु फिर भी दूर हैं ।
चित्त की चञ्चलता, देखो कितनी मशहूर है ।
प्रभु-पथ में भी चञ्चलता, रोड़ा ही अटकाय । चित्त की ।।२।।
विषयी बन मन मेरा, विकारों को जगाता है ।
सद्विचार भी बने कभी तो, उनको दूर भगाता है ।
चञ्चलता से ग्रसित मन, पकड़ में न आये । चित्त की ।।३।।
ओ३म् सर्वरक्षक प्रभु, सर्व शक्तिशाली है ।
पर मन की चञ्चलता भी, कितनी निराली है ।
ओ३म् नाम का अमृत-रस, पीने से घबराय । चित्त की ।।४।।
मन भूल चुका है हानि-लाभ, विषयों में डूबा है ।
मन फिर भी अघाता नहीं, यही तो अजूबा है ।
मृग-मरीचिका में ही, गोता खूब लगाये । चित्त की ।।५।।
स्वयं होकर चञ्चल मन, दुनिया को नचाता है ।
विषयी कीचड़ में फंसकर, दुःख बहुत ही पाता है ।

फिर भी दुष्ट मन, सबक सीख न पाय । चित्त की ॥६॥
मौज-मस्ती फैशन-परस्ती, मन का परिधान है ।
जब तक जीवो सुखी जीवो, मन का संविधान है ।
मन अपनी दुष्टता से, सबको दुःख पहुँचाये । चित्त की ॥७॥
मन आखिर सेवक है, आत्मा का भाई !
मन को काबू करने में, होती आत्मा को कठिनाई ।
दुर्बलता आत्मा स्वयं क्यों, चञ्चलता ही अपनाये । चित्त की ॥८॥
'वेदमित्र' नहीं चेतन का, जड़ से जो डरता है ।
अज्ञानी विषयी बन, उलटे काम जो करता है ।
इन्द्र होकर भी इन्द्रियों को, जो भक्ति में न लगाये । चित्त की ॥९॥

भजन ७

मन की मलिनता को दूर करूँ, दूर करूँ दूर करूँ मलिनता को दूर करूँ ।
जागृत होकर देखूँ समझूँ, मन की चञ्चलता को परखूँ ।
मन को काबू में जरूर करूँ, मन की मलिनता को दूर करूँ ॥
मन चञ्चल होकर भटकता, भूत भविष्य में जा अटकता ।
वर्त्तमान की ही मैं सैर करूँ, मन की मलिनता को दूर करूँ ॥
चञ्चल मन चिन्ता को लाता, दुःख-सागर में यह ले डुबाता ।
दुःख-सागर में न कभी गिरूँ, मन की मलिनता को दूर करूँ ॥
सधने पर मन सुख दिलाये, व्यक्तित्व अपना सुखों को पाये ।
सावधानी से मन डोर पकडूँ, मन की मलिनता को दूर करूँ ॥

आरती ८

ओं जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।
भक्त जनों के संकट क्षण में दूर करे । ओं ॥१॥
जो ध्यावे फल पावे, दुःख विनशे मन का ।
सुख सम्पत्ति घर आवे, कष्ट मिटे तन का । ओं ॥२॥
मात-पिता तुम मेरे, शरण गहूं किसकी ।
तुम विन और न दूजा, आस करूं जिसकी । ओं ॥३॥
तुम पूर्ण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी ।
पार-ब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी । ओं ॥४॥
तुम करुणा के सागर, तुम पालन-कर्त्ता ।
मैं सेवक तुम स्वामी, कृपा करो भर्त्ता । ओं ॥५॥
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपति ।
किस विधि मिलूँ दयामय, तुमको मैं कुमति । ओं ॥६॥
दीनबन्धु दुःख-हर्त्ता, तुम रक्षक मेरे ।
अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे । ओं ॥७॥
विषय-विकार मिटाओ, पाप हरो देवा ।
श्रद्धा-भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा । ओं ॥८॥



आर्यसमाज के नियम

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है ।

२. ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान् न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है । उसी की उपासना करनी योग्य है ।

३. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है । वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है ।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये ।

५. सब काम धर्मानुसार, अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करने चाहिये ।

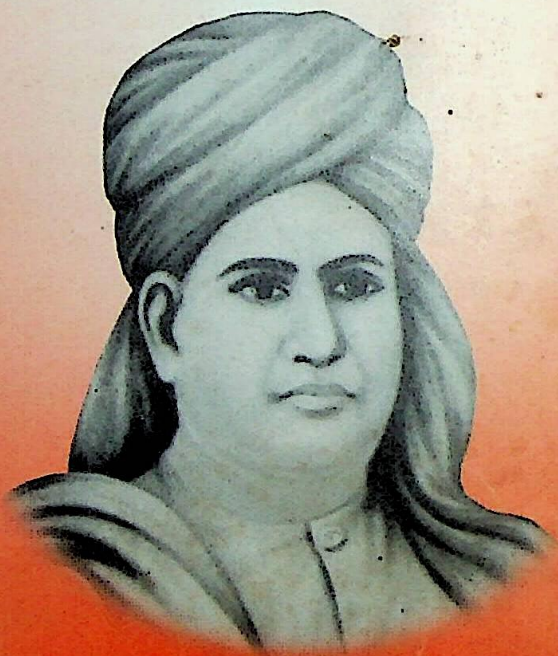
६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७. सब से प्रीति-पूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिये ।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये ।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये । किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये ।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व-हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये । और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें ।



महर्षि दयानन्द सरस्वती

रामलाल कपूर ट्रस्ट

रेवलीगाँव, सोनीपत (हरियाणा)